Research maGma

(An International Multidisciplinary Journal)

UGC Approved Journal No: 63465

Editor in Chief
Dr. Sanjay Kumar Singh

Associate Editor
Dr. T. Manichander

Research maGma

Research maGma is a multidisciplinary research journal, published monthly in all Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed .

Our Editorial Board

Dr Anil Kumar S.

Dr. Gatade Dattatraya Ganapati

Dr. Prashant Thote

Dr. Deepa Viswam

Dr. Anamika Kumari

Smt. B.S.Gunarekha

Dr. P. Samuel

Dr. Pargat Singh Garcha

Dr. M. Abdul Jamal

Dr. Tapas Pal

Dr. Gardi Balu Pandurang

Dr. Dnyaneshwar Babulal Shirode

Dr. Ashokkumar B. Surapur

Dr. N. Sasikumar

Dr. Saykar Satish Govind

Dr. A. Paul Albert

Dr. Atul Hansraj Salunke

Mr. Sanjeev Kumar Mishra

Dr. Neeta Sukhendrapal Singh

Dr. Kispotta Seraphinus

Dr. Santosh Kumar Behera

Dr. Sandhya Ayaskar

Dr. S. Aravind

Dr. Sandeep V. Binorkar

Dr. Raval Sandeep Krishnat

Dr. Mahesh Nawria

Dr. Tamanna Kaushal

Dr. Deepak B. Nale

Dr. Ram Chander

Dr. Sudhir Kumar Jena

Dr. S Maxwell Lyngdoh

Dr. Bhed Pal Gangwar

Dr. Shaikh Fahemeeda

Dr. Deshai Rajesh Bhaurao

Research maGma
An International Multidisciplinary Journal
ISSN- 2456-7078 IMPACT FACTOR- 4.520
VOL-1, ISSUE-10, DEC-2017

पातंजलयोगसूत्र में अधिगम की अवधारणा

[१]शशिकान्त मणि त्रिपाठी, [२]डॉ. उपेन्द्र बाबू खत्री, [३]डॉ. अखिलेश कुमार सिंह, [४].डॉ. शाम गणपत तीख
[१]पी.एच.डी. साँची बौद्ध भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय, रायसेन, (म.प्र.)
[२]सहायक प्रध्यापक साँची बौद्ध भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय, रायसेन, (म.प्र.)
[३]सहायक प्रध्यापक साँची बौद्ध भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय, रायसेन, (म.प्र.)
[४]सहायक प्रध्यापक साँची बौद्ध भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय, रायसेन, (म.प्र.)

सारांश

भारतीय दर्शन परंपरा में अधिगम का संबंध अंतरात्मा के ज्ञान से है। योगदर्शन महर्षि पतंजलि द्वारा विरचित एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। जिसमें अधिगम प्रक्रिया का वर्णन आया है। ईश्वर की भक्ति से अंतरात्मा अधिगम सरलता से किया जा सकता है।''ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमो प्यन्तरायाभावश्च।।'' अंतरात्मा का ज्ञान ही योग साधना का परम लक्ष्य है। पुरूषार्थ चतुष्टय् में मोक्ष की प्राप्ति परम पुरूषार्थ है। मनुष्य के जन्म मुख्य लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति है। जो योग के माध्यम से सम्भव है।

महर्षि पतंजलि के अनुसार योग चित्तवृत्तियों का निरोध है। ''योगश्चित्तवृत्ति निरोधः।।'' इस योग से द्रष्टा को अपने स्वरूप का बोध होता है। द्रष्टा और दृश्य के याोग से सृष्टि होती है। अविद्या का जन्म भी इसी के परिणाम स्वरूप होता है।

अविद्या क्लेशों का मूल है, जिससे मुक्त होने के लिये जीव जीवन भर प्रयास करता है। योग विद्या से अविद्या जनित अधिगम से निवृत्ति होती है। यौगिक अधिगम का लक्ष्य द्रष्टा का दृश्य से वियोग है। जिसके पश्चात् साधक को अपने शुद्ध चैतन्य आनंद स्वरूप का ज्ञान होता है।

प्रस्तुत शोध–पत्र में यौगिक अधिगम के बारे में वर्णन किया गया है। जीव के दुःख की आत्यान्तिक निवृत्ति अपने स्वरूप बोध के पश्चात् ही होती है। द्रष्टा जब दृश्य से मुक्त होता है, तब अपने स्वरूप में स्थित होता है। द्रष्टा का स्वरूपाधिगम ही योग है। यह योग विद्या ही द्रष्ट–दृश्य संयोग से उत्पन्न अविद्यादि पंच क्लेशों से मुक्ति दिलाती है। जो मुक्ति दिलाए उसे विद्या कहते है। ''सा विद्या या विमुक्तये'' अर्थात विद्या वह है, जो मुक्ति प्रदान करें।

प्रमुख बिन्दु :

अधिगम, योगसाधना, चित्तवृत्ति, विद्या–अविद्या, योगसूत्र, ईश्वरप्रणधान।

प्रस्तावना :

भारतीय षट्दर्शन में महर्षि पतंजलि द्वारा प्रणीत योगदर्शन एक अत्याधिक महत्वपूर्ण तथा निर्विवाद दर्शन है। आत्मानुभूति के लिए योग की साधना परम आवश्यक है। स्वरूपाधिगम चित्त वृत्तियों के निरोध होने पर होता है। योगसूत्र 195 सूत्रों एवं चार पादों में विभक्त है। प्रथमपाद समाधिपाद है। जिसमें 51 सूत्रों में योग चित्त और उसकी वृत्तियों, समाधि और उसके प्रकारों का वर्णन है। द्वितीय पाद साधन पाद है, जिसमें क्रियायोग, अष्टांगयोग, पंच क्लेशों तथा उन क्लेशों को दूर करने के साधन तथा

योग के बहिरंग साधन आदि का 55 सूत्रों में वर्णन है। तृतीय पाद विभूतिपाद कहलाता है। इस पाद में 55 सूत्रों में योग के अंतरंग साधन एवं योग की साधना से उत्पन्न योग की विभूतियों का वर्णन किया गया है। अंतिम चतुर्थ पाद कैवल्यपाद है। इस पाद में 34 सूत्रों में समाधि सिद्धि और कैवल्य आदि का वर्णन किया गया है।

महर्षि पतंजलि ने योग को चित्तवृत्तियों का निरोध कहा है। ''योगश्चित्तवृत्ति निरोधः।।'' द्रष्टा को स्वरूप का अधिगम इसके पश्चात् होता है। ''तदा द्रष्टुः स्परूपे वस्थानम्।।'' पातंजलयोगसूत्र के प्रथम पाद (समाधिपाद) के 29वें सूत्र में अधिगम शब्द आया है। यहॉ अधिगम का अर्थ अंतरात्मा के स्वरूप का ज्ञान है। जो कि ईश्वरनाम जप का फल है। स्वरूप का अधिगम चित्त वृत्तियों के निरोध के पश्चात् होता है।

योग तथा अधिगम :

योगा अंगों के अनुष्ठान करने से अशुद्धियों का नाश होने पर ज्ञान का प्रकाश विवेक ख्याति पर्यंत हो जाता है।। सामान्य अर्थों में अधिगम से अभिप्राय सीखने से है। सीखना जीवन पर्यंत चलने वाली एक सतत प्रक्रिया है। व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास इसी प्रक्रिया के द्वारा होता है। वर्तमान में हमें जो कुछ भी ज्ञान है i वह हमने किसी न किसी रूप में सीखा है। संसार में मनुष्य का जन्म धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धि के लिए हुआ है। क्रमशः इन पुरुषार्थों को सिद्ध करके हमें अपने स्वरूप का ज्ञान होता है।

योगसूत्र में आत्म स्वरुप के ज्ञान को अधिगम कहा गया है। अधिगम द्रष्टा का अपने स्वरुप में स्थित होना है और यह तब होता है। जब चित्त की सारी वृत्तियां निरुद्ध हो जाती है। हम जिन साधनों के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करते है। उनमें पांच ज्ञानेंद्रियाँ और अंतःकरण चतुष्टय अर्थात मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार सम्मिलित है। ज्ञान के इन साधनों से हम सीखते रहते है। सीखने के क्रम में हम श्रुत बुद्धि और अनुमान बुद्धि का प्रयोग करते रहते है। श्रुत बुद्धि का अधिगम सुनकर व पढ़कर और अनुमान बुद्धि का अधिगम प्रत्यक्ष ज्ञान की स्मृति के आधार पर होता है। संसार का ज्ञान श्रुत प्रज्ञा और अनुमान प्रज्ञा के द्वारा हो सकता है। परंतु आत्म स्वरूप का ज्ञान ऋतंभरा प्रज्ञा से प्राप्त होता है।

योग की साधना के पश्चात जब निर्विचार समाधि अत्यंत निर्मल होती है। तब अध्यात्म प्रसाद प्राप्त होता है। उस समय प्रज्ञा ऋतंभरा होती है। इस ऋतंभरा प्रज्ञा से वस्तु के यथार्थ और पूर्ण स्वरूप का ज्ञान होता है।

योग में अधिगम की अवधारणा :

विद्या और अविद्या दोनों अनिवार्य :

योग में अधिगम की अवधारणा ऋतंभरा प्रज्ञा से प्राप्त ज्ञान से है। इस ज्ञान से मुक्ति मिलती है। जो मुक्ति दिलाए उसे विद्या कहते है। ''सा विद्या या विमुक्तये'' अर्थात विद्या वह है, जो मुक्ति प्रदान करें। संसार की सृष्टि अविद्या जनित ज्ञान के कारण होती है। अविद्या से जन्म लेने वाला ज्ञान क्लेश प्रदायी है। सारे क्लेशों का मूल कारण अविद्या है। इससे मुक्ति विद्या प्रदान करती है। इसलिए योग 'विद्या' है। विद्वानों के द्वारा इसे 'योगविद्या' ही कहा गया है। योग का अधिगम जीव को क्लेशों से मुक्त कर सकता है। प्रत्येक चेतना का अधिगम ही योग का अधिगम है। ''ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमो प्यन्तरायाभावश्च।।'' इसके बिना विद्या और अविद्या भी अज्ञान के अंधकार को दूर नहीं कर सकते है।

यजुर्वेद का 40वे अध्याय (जिसे ईशावास्योपनिषद् भी कहते हैं) में कहा गया है, कि जो केवल अविद्या अर्थात् भौतिक–पदार्थपरक विद्या की ही उपासना करते है, वह गहन अंधकार अर्थात् सांसारिक उपभोग के साधनों में आसक्त होते हुए अंततोगत्वा नारकीय जीवन को व्यतीत करते है i और वे जो केवल विद्या (चेतना विद्या) की ही उपासना में अनुरक्त है वे धर्म, अर्थ और कामवासना के अवशेष रहने से गहनतम अंधकार को प्राप्त होते हैं।

अतः विद्या और अविद्या दोनों की साधना करनी चाहिए। जैसा कि कहां भी गया है कि जो व्यक्ति विद्या और अविद्या दोनों को साथ–साथ जानता है। वह अविद्या के द्वारा मृत्यु को जीतकर अर्थात सांसारिक सुख साधनों का उपयोग करता हुआ अंत में विद्या (आत्मज्ञान) के द्वारा अमरता को प्राप्त करता है। अविद्या जनित ज्ञान से जो अधिगम होता है। उससे इह लोक में अभ्युदय और जो विद्याजनित ज्ञान से जो अधिगम होता है उससे परलोक में निःश्रेयस की प्राप्ति होती है।

मानव जीवन का परम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति है। मुण्डकोपनिषद् में इस परम पद मोक्ष की प्राप्ति के लिए विद्या को परा और अपरा नाम से दो भागों में बांटा गया है। ऐहिक ही का अभ्युदय दिलाने वाली विद्या अपरा जिसके अंतर्गत चारों वेद एवं छः वेदांग आते हैं, और भवसागर से मुक्त करा कर परमतत्व (अक्षरब्रह्म) का ज्ञान कराने वाली विद्या को परा विद्या कहा गया है। इसी प्रकार बृहदारण्यकोपनिषद में एक दृष्टांत है। जिसमें ''विद्यया देवलोको'' अर्थात विद्या से देवलोक की और कर्मणाः पितृलोकः अर्थात कर्म अविद्या से पितृलोक की प्राप्ति होती है।

संसार में हम जो ज्ञान प्राप्त करते है वह बाह्य–करण और अंतः करण के माध्यम से प्राप्त करते है। इन करणों से प्राप्त ज्ञान, अज्ञान के अंधकार को दूर नहीं कर पाता है। शरीर और इंद्रियों से प्राप्त ज्ञान अस्मिता जन्य होता है। अस्मिता का जन्म अविद्या के कारण होता है और द्रष्टा और दृश्य संयोग से अविद्या का जन्म होता है। संसार दुःख स्वरूप है, जो हेय है। इसकी सृष्टि

का कारण द्रष्टा और दृश्य का संयोग है। यह संयोग ही दुख का कारण है।

संसार का हर जीव इस दुःख के कारण ही सुख खोजता रहता है। सुख की खोज जीवो के दुःखी होने का प्रमाण है। क्योंकि खोज उसकी होती है जो होता तो है, मगर कहीं खो गया है। प्रकृति से पुरुष का संयोग हो जाने के पश्चात पुरुष अपने स्वरूप को भूलकर प्रकृति के स्वभाव को ही अपना स्वरूप समझने लगता है। द्रष्टा और दृश्य का संयोग चित्तवृत्तियों का निर्माण करता है। इस संयोग के पश्चात चित्त पांच वृत्तियों से आवृत्त हो जाता है। ये पांच वृत्तियॉ–प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति है।

जीव इन्ही पांच वृत्तियों के साथ जगत में जीवन व्यतीत करता है। जगत का सारा ज्ञान चित्त वृत्तात्मक है। यह ज्ञान दृिक और दर्शन शक्ति की एकता के पश्चात जन्म लेने वाले अस्मिता के कारण होता है। जिन योगियों को प्रत्यक चेतना का अधिगम होता है। उन्हें पुरुष के ज्ञान से प्रकृति के गुणों में तृष्णा का सर्वथा अभाव हो जाता है। और पर वैराग्य की प्राप्ति हो जाती है। जिनकी प्रज्ञा ऋतंभरा होती है। उन्हें इस संसार में सब में परिणाम, ताप और संस्कार दुख तथा तीनों गुणों की वृत्तियों में परस्पर विरोध होने के कारण दुख ही दिखाई देता है।

यह दृश्य जगत किसी न किसी रूप में उन्हें दुःख रूप ही दिखाई देता है, जिन्हें अपने स्वरूप का अधिगम हो गया है। योग सूत्र में अधिगम की अवधारणा द्रष्टा का दृश्य जगत की वृत्तियों से मुक्त होकर स्वरूपस्थ होना है।

जब दृश्य जगत की वृत्तियों से द्रष्टा का वियोग होता है और द्रष्टा अपने स्वरुप में होता है तब योग का अधिगम होता है। इस अधिगम में ईश्वर प्रणिधान एक साधन है। क्योंकि ईश्वर में सर्वज्ञता का ज्ञान निरतिशय है।

ईश्वर पुरूष विशेष है। जो क्लेश, कर्म, विपाक और आशय से सर्वथा मुक्त है। यह ईश्वर पूर्वजों का भी गुरु है क्योंकि इसका किसी भी समय में अवच्छेदन नहीं हुआ है। इस ईश्वर के स्वरूप का चिंतन और नाम जप करने से अंतरायों का अभाव और आत्म स्वरूप का भी ज्ञान (अधिगम) होता है। प्रकृति से युक्त पुरूष कालाधीन और प्रकृति से मुक्त पुरुष कालातीत होता है। ईश्वर के स्वरूप का चिंतन करने से द्रष्टा के स्वरूप का साक्षात्कार होता है। यही योग सूत्र में अधिगम की अवधारणा है।

यौगिक अधिगम में विघ्न

यौगिक अधिगम में चित्त के नौ विक्षेप– व्याधि, स्त्यान, संशय, प्रमाद, आलस्य, अविरति, भ्रांतिदर्शन, अलब्धभूमिकत्व और अनवस्थित्व ही अंतरायः है।

''व्याधिस्त्यानसंशयप्रमादालस्याविरतिभ्रांतिदर्शनालब्धभूमिकत्वानवस्थितत्वानि चित्तविक्षेपास्ते न्तरायाः।।''

चित्त के इन विक्षेपों के साथ–साथ दुःख, दौर्मनस्य अंगमेजयत्व श्वास और प्रश्वास ये पांच विघ्न भी आते है। चित्त के विक्षेप और विघ्नों को दूर करने के लिए एकत्व का अभ्यास करना चाहिए।

ईश्वर के स्वरूप का चिंतन और उसके नाम ओम का जप करने से इन अंतरायों का अभाव हो जाता है। इन विघ्न और विक्षेपों की उपस्थिति आत्म स्वरूप का बोध नहीं होने के कारण होती है। जैसे प्रकाश की उपस्थिति मात्र से अंधकार का अभाव हो जाता है। उसी प्रकार प्रत्येक चेतना के अधिगम से अंतरायों का अभाव हो जाता है। जिस प्रकार अंधकार प्रकाश का अभाव है उसी प्रकार चित्त के विक्षेप और विघ्न, चेतना के अधिगम का अभाव हैं। यौगिक अधिगम के प्रत्यक्ष होने मात्र से चित्त के विक्षेप और विघ्न दूर हो जाते है।

ऋग्वेद में साधक को परा–विद्या (जो मोक्ष प्रदायी है) की प्राप्ति के लिए आत्मा वारे द्रष्टव्योः श्रोतव्यों, मन्तव्यों, निदिध्यासिव्य का उपदेश दिया गया है। इसी प्रकार तैतिरीय उपनिषद् की शिक्षा वल्ली में ''सत्यं वद्, धर्मं चर। स्वाध्याय यान्माप्रमदः'' का उपदेश दिया गया है। आत्म तत्व का अधिगम ही सत्य का ज्ञान है। इस ज्ञान से अधिगमकर्ता को मोक्ष रूपी पुरुषार्थ की सिद्धि होती है।

वैदिक अधिगम प्रक्रिया में अधिगमकर्ता को अंतेवासी कहा गया है। आचार्य अपने उपदेश से अंतेवासी को श्रुतर्षि बनाता है।

सत्य का श्रवण करने से जो श्रुत थे, वही अंतेवासी सत्य का साक्षात्कार करने से ऋषि बन जाते है। अधिगम की प्रक्रिया सत्य के साक्षात्कार से पूर्ण होती है। सत्यम् ज्ञानम् अनंतं ब्रह्म अर्थात सत्य ज्ञान अनंत ब्रह्म है।

यजुर्वेद के महर्षियों ने अधिगम के लक्ष्य को स्पष्ट करते हुए कहा है। कि सत्य का मुख्य स्वर्ण पात्र से ढका हुआ है। सत्य के दर्शन के लिए हे पूषन्! तू उसे हटा दे।

''हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्। तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।।''

सत्य का दर्शन योग के अधिगम का लक्ष्य है। जिसकी प्राप्ति चित्तवृत्तियों के निरोध से होती है। यह दृश्य जगत असत् और मरण धर्मा है। इससे द्रष्टा का संयोग हो जाने पर अविद्या के कारण द्रष्टा, दृश्य जगत के धर्म को धारण कर लेता है। अपना स्वरूप भूलकर दृश्य के स्वभाव को अपना मान लेना अविद्या है। जिसके परिणाम स्वरुप अज्ञान के अंधकार का उदय होता है। द्रष्टा जब अपना सत् स्वरूप त्यागकर असद् रूप भोग को अपना स्वाभाविक धर्म समझने लगता है। तब अविद्या का जन्म होता है। इस अविद्या से मुक्ति चेतना के अधिगम से होता है। बृहदारण्यकोपनिषद् में वर्णन है–

''असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा मृतम् गमय ''

उपसंहार :

इस प्रकार मानव जीवन का परम लक्ष्य आत्मा का अधिगम है। जिससे मोक्ष रूपी परम पुरुषार्थ की सिद्धि होती है। इसकी प्राप्ति के लिए योग सूत्र में यौगिक तकनीकी के रूप में अष्टांग योग, क्रिया योग और अभ्यास एवं वैराग्य रूपी साधनों का वर्णन किया गया है। साधक अपनी योग्यता अनुसार इन साधनों का चयन करके चित्त की बाधाओं को दूर कर प्रत्यक चेतना का अधिगम कर सकता है।

ईश्वर विशेष पुरुष है। वह सर्वज्ञ है। परिवर्तनशील प्रकृति से किसी भी काल में इस विशेष पुरुष का संयोग नहीं होता है। प्रकृति और पुरुष के संयोग से जन्म लेने वाले क्लेश, कर्म, विपाक और आशय से ईश्वर का कोई संबंध नहीं है। इसलिए ईश्वर प्रणिधान के द्वारा स्वरूपाधिगम होता है। स्वरूप का अधिगम ही योग दर्शन का परम लक्ष्य है। महर्षि पतंजलि चित्तवृत्तियों के निरोध के पश्चात होने वाले योग से स्वरूप का अधिगम करने की ही बात करते है। योग दर्शन का अधिगम आत्म साक्षात्कार है। पुरुषार्थ चतुष्टय में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि अष्टांग यौगिक तकनीकी से होता है।

संदर्भ सूची

1.योगसूत्र (1/2)
2.योगसूत्र (1/3)
3.ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमो प्यन्तरायाभावश्च।।
4.योगसूत्र (2/28)
5.योगसूत्र (1/2 एवं 3)
6.योगसूत्र (1/40)
7.योगसूत्र (1/41)
8.योगसूत्र (1/29)
9.युजुर्वेद (40/9)
10.यजुर्वेद 40/11)
11.मुण्डकोपनिषद्(1/1/5)
12.बृहदारण्यकोपनिषद् (1/5/16)
13.''द्रष्टृदृश्ययोः संयोगो हेयहेतुः'' योगसूत्र (2/17)
14.''वृत्तिसारूप्यमितरत्र'' योगसूत्र (1/4)
15.''प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः।।''योगसूत्र (1/6)
16.''दृग्दर्शनशक्त्योरेकात्मतेवास्मिता।।'' योगसूत्र (2/6)
17.''तत्परं पुरूषख्यातेर्गुणवैतृष्ण्यम्।।'' योगसूत्र (1/16)
18.''परिणामतापसंस्कारदुःखैर्गुणवृत्तिविरोधाच्च दुःखमेव सर्व विवेकिनः।।'' योग सूत्र (2/15)
19.''तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम्।।'' योगसूत्र (1/25)
20.''क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरूषविशेष ईश्वर।।'' योग सूत्र (2/24)
21.''ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमो प्यन्तरायाभावश्च।।'' योग सूत्र (1/29)
22.योगसूत्र (1/30)
23.''दुःखदौर्मनस्याङ्गमेजयत्वश्वासप्रश्वासा विक्षेपसहभुवः।।'' योग सूत्र (1/31)
24.''तत्प्रतिषेधार्थमेकतत्त्वाभ्यासः।।'' योग सूत्र (1/32)
25.तैतिरीयोपनिषद् (शिक्षा/11/1)
26.ब्रह्म सूत्र (1/1/23)
27.यजुर्वेद (40/15)
28.बृहदारण्यकोपनिषद् (1/3/28)